International Journal of Sanskrit Research 2022; 8(3): 147-150

International Journal of Sanskrit Research

अनन्ता

ISSN: 2394-7519
IJSR 2022; 8(3): 147-150
© 2022 IJSR
www.anantaajournal.com
Received: 15-03-2022
Accepted: 19-04-2022

डॉ. गणेश भागवत
विभागाध्यक्ष, संस्कृत विभाग,
राजकीय महाविद्यालय गुप्तकाशी
(विद्यापीठ), रुद्रप्रयाग, उत्तराखंड, भारत

Corresponding Author:
डॉ. गणेश भागवत
विभागाध्यक्ष, संस्कृत विभाग,
राजकीय महाविद्यालय गुप्तकाशी
(विद्यापीठ), रुद्रप्रयाग, उत्तराखंड, भारत

गंगापुत्रावदानम् प्रथम सर्ग में अलंकारविधान

डॉ. गणेश भागवत

प्रस्तावना

"कवेः कर्म काव्यम्" इस व्युत्पत्ति के अनुसार कवि की रचना काव्य कहलाती है। इसी काव्य रचना द्वारा कवि अपने विचारों और भावों की अभिव्यक्ति प्रकट करता है। प्रभावी विचारों के निष्पादन व स्वरचना सौंदर्य वृद्धि हेतु कवि अन्य तत्वों का प्रयोग करता है। उन्हीं तत्वों में से अलंकार प्रमुख हैं। भारतीय वांग्मय में अलंकार की महिमा विशाल है। मानव ही नहीं प्रत्युत प्रकृति भी अपने अंगों को अलंकृत करने से विमुख नहीं रहती। आचार्यों ने शब्दार्थ समूह को काव्यपुरुष का शरीर तथा अनुप्रास–उपमादि को अलंकार या आभूषण बताया है। 'अलंक्रियते अनेन इति अलंकारः' जिससे सुशोभित किया जाए वह अलंकार है। 'अलंकरोति इति अलंकारः' जो सुशोभित करें वह अलंकार है। इस प्रकार शब्दार्थ रूप काव्य को सुंदर, आह्लादक एवं आकर्षण बनाने वाले धर्म अलंकार हैं। आचार्य मम्मट ने अलंकारों को शरीर के शोभावर्धक हार–कटक–कुंडल आदि के समान माना है –

उपकुर्वन्ति तं सन्तं येऽङ्ग द्वारेण जातुचित्
हारादिवद् अलंकाराः तेऽनुप्रासोपमादयः ।।[1]

संस्कृत साहित्य में काव्य रचना संस्कृत साधकों को आह्लादित करती है। प्राचीन काल से ही साहित्य सर्जना ने मानव सभ्यता,संस्कृति को संवर्धित किया है, और तत्कालीन सामाजिक, सांस्कृतिक व प्रासंगिक दशाओं का चित्रण किया है।युगानुकूल प्रवृत्ति संस्कृत साहित्य में स्पष्टतः दृष्टिगोचर होती है।

23 सर्गों में निबद्ध महाकाव्य गंगापुत्रावदानम् निरंजन मिश्र की कालजयी रचना है। जिसमें एक ऐसे युवा सन्यासी स्वामी निगमानंद (मूल नाम स्वरूपम्) के चरित्र को स्थापित किया है,जो भौतिक सुख संसाधनों को छोड़कर भगवती गंगा की अविरलता एवं स्वच्छता की रक्षा के लिए खनन माफियाओं के विरुद्ध विद्रोह कर देते हैं और अंततः 13 जून 2011 को इस पंचभौतिक शरीर को छोड़कर परम तत्व में विलीन हो जाते हैं। गंगापुत्रावदानम् महाकाव्य के प्रथम सर्ग में कवि ने देवभूमि उत्तराखंड का रम्य व मनोहारी वर्णन किया है। उत्तराखंड की भौगोलिक, दर्शनीय पवित्र स्थलों, व निवास करने वाले जनसमुदाय का चित्रण किया है। प्रथम सर्ग में कवि ने उत्तराखंड वर्णन में सहज व सरल ही अलंकारों का प्रयोग कर काव्य सौंदर्य को संवर्धित किया है। अलंकार प्रयोग कवि के अलंकार– वैदुष्य को प्रदर्शित करता है।

अलंकार योजना को दो भागों में विभक्त किया जा सकता है। शब्दालंकार और अर्थालंकार। शब्दालंकार योजना में कवि ने अनुप्रास, श्लेष, का प्रयोग किया है, उनमे भी अंत्यानुप्रास की छटा दर्शनीय है –" वर्णसाम्यमनुप्रासः " अर्थात् वर्णों की समानता होने पर अनुप्रास अलंकार होता है। प्रथम सर्ग में यथा –

दिव्याम्बराणां जनताधिपानां
दिगम्बराणाञ्च तथा प्रजानां।
वाचस्पतिनामधिकारिणां वै
निवासभूमिः खलु देवभूमिः।।[2]

यहाँ म् ब् वर्णों, भूमि – भूमि वर्णों की एक बार आवृति हुयी है। दूसरे में –

तुष्टो यथा नंदकुलावतंसः
प्रीतो यया सूर्यकुलावतंसः।
तयोर्जनित्री गुणकर्मधात्री
सत्पुत्रिकाऽराधितदेवभूमिः।।[3]

---

[1] काव्यप्रकाश पृष्ठ –385

[2] गंगापुत्रावदानम्,पृष्ठ105

[3] गंगापुत्रावदानम्,पृष्ठ –113

यहाँ य्, त्, स्, त्र वर्णों की एक से अधिक बार आवृति हुयी हैं। प्रथम सर्ग में कवि ने अन्त्यानुप्रास का अधिक प्रयोग किया है–

वृषस्य पृष्ठे निहितासनस्य
शिखि द्विपाभ्यां मुदितेक्षणस्य।
नृत्यर्थिणो दग्धमनोभवस्य
केदारनाथस्य हि देवभूमिः।।[4]

स्वर के साथ व्यंजन की आवृत्ति पद के अंत में आये तो अन्त्यानुप्रास होता है। यहाँ अंतिम चरण को छोड़ पूर्व तीन चरणों के अंतिम शब्दों में स्, य् की स्वर व्यंजन युक्त आवृत्ति हुयी है। और भी द्रष्टव्य है –

कांतमनोमोदन पण्डितस्य
हिमाद्रिकुक्षौ धृतिविग्रहस्य
सदा प्रसन्ना बदरीस्वरस्य।।[5]

अन्यत्र भी –

गजेंद्रसम्मर्दितधान्यगंधा
मृगेन्द्रदंतोद्धृतमांसगंधा
सत्पुण्डरीकोदगतदिव्यगंधा।।[6]

"श्लिष्टैः पदैरनेकार्थाभिधाने श्लेष इष्यते" अर्थात् जहाँ श्लिष्ट पदों द्वारा अनेक अर्थों का अभिधान किया जाता है, वहां श्लेष अलंकार होता है।[7] प्रथम सर्ग में श्लेष योजना द्रष्टव्य है –

वृषं वनेस्मिन् परिचारयन्ती
द्विजिह्वमालामपसारयन्ती।
संवाहयन्ती निजनीलकंठः
गजेंद्रभीता गिरिजा नवीना।।[8]

यहाँ गिरिजा शब्द श्लिष्ट है जिसके दो अर्थ हैं – पर्वतीय स्त्री, तथा पार्वती। इसी प्रकार अन्य स्थलों में –

वृषस्य पृष्ठे निहितासनस्य
शिखि द्विपाभ्यां मुदितेक्षणस्य।
नृत्यर्थिणो दग्धमनोभवस्य
केदारनाथस्य हि देवभूमिः।।[9]

यहाँ केदार शब्द श्लिष्ट है जिसके अर्थ हैं –भगवान शिव और कृषक। अन्यत्र–

एकां प्रतोष्यापरगेहवासं
कुर्वन्ति कृष्णा मधुपा द्विरेफाः।।[10]

यहाँ मधुप शब्द श्लिष्ट है,जिसके दो अर्थ भ्रमर और मद्यपान करने वाला। श्लेष के द्वारा उत्तरखंड की शोचनीय स्थिति किसने बनायी है यह बात व्यक्त करते हुए कहते हैं –

सुरेशभूमौ त्रिदशापगायाः
शोच्या स्थितिः केन कृता न जाने।।[11]

सुरेश शब्द के दो अर्थ –सुराणाम् ईशः देवराजः, दूसरा सुराया ईश्वरस्य मद्यं पीत्वा मदमत्तस्य अर्थात् शराबी।
विषय–वस्तु और प्रसंगानुकूल आधार पर कवि ने तत् –तत् अर्थालंकारों का प्रयोग कर वर्णनीय वस्तु में उत्कृष्टता का विधान किया है। देवभूमि उत्तराखंड के धैर्य की उपमा यहाँ की माताओं के धैर्य से की है। यहाँ की माताएं युद्ध में वीरगति को प्राप्त हुए पुत्र की वीरता का ध्यान कर गर्वपूर्वक धैर्यधारण करती हैं–

सचन्दनं साक्षतपूर्णपात्रं
सतैलदीपं रमणीयसूत्रं।
विलोकयंत्याः स्वसहोदरायाः
मातेव धीरा गगनेशभूमिः।।[12]

कविवर निरंजन मिश्र पर्वतीय क्षेत्र में विकास के नाम पर किये जा रहे जंगलदोहन, वृक्षकटान, प्रदूषण आदि को रूपक के
माध्यम से प्रस्तुत करते हैं –

"विकास" नामा खरराजदूतो
यथा यथा सर्पति शैलभूमिम्।
तथा तथा नश्यति काननश्रीः
दूतानुगंत्रा कटुदूषणेन।।[13]

आचार्य विश्वनाथ रूपक का लक्षण करते हैं – "रूपकं रूपितारोपाद विषये निरपह्नवे " अर्थात् रूपक वह अलंकार है जिसे न छिपाये गए विषय पर विषयी का अभेदरोप कहा जाया करता है।[14] यहां विकास में राजदूत का आरोप है अर्थात् विकास ही राजदूत है। और भी –

लताऽऽबलाऽऽलिंगनचाटुकारः
सदा प्रमत्तः खलु वायुरेव।।[15]

यहाँ लता में अबला का आरोप होने से रूपक है।
जहाँ वर्णनीय वस्तु में या उपमेय में सदृश वस्तु अर्थात् उपमान की संभावना की जाती है उत्प्रेक्षा अलंकार होता है

"सम्भावनमथोत्प्रेक्षा प्रकृतस्य समेन यत् "[16]

गंगापुत्रावदानं में यथा –

सदा प्रसन्ना हरिता लतापि
रक्तप्रसूना स्मरतीव भाति।
निशुम्भशुम्भान्तविधायिनी तां
लास्यं दिशन्तीमपि रौद्ररूपाम्।।[17]

यहाँ हरित लता भी लाल पुष्प धारण मानो भगवती का स्मरण कर रही है में संभावना की गयी है। अन्यत्र भी –

जलं वहन्त्यो मधुरं लपंत्यः
महार्घदिव्याभरणास्तरुण्यः।
वने भ्रमन्त्यो वनदेवताया
विभान्ति सख्यः शिशुचन्द्रमुख्यः।।[18]

[4] गंगापुत्रावदानम्,पृष्ठ –111
[5] गंगापुत्रावदानम्,पृष्ठ –112
[6] गंगापुत्रावदानम्,पृष्ठ –114
[7] साहित्यदर्पण,पृष्ठ –675
[8] गंगापुत्रावदानम्,पृष्ठ –88
[9] गंगापुत्रावदानम्,पृष्ठ –111
[10] गंगापुत्रावदानम्,पृष्ठ –86
[11] गंगापुत्रावदानम्,पृष्ठ –95
[12] गंगापुत्रावदानम्,पृष्ठ –52
[13] गंगापुत्रावदानम्,पृष्ठ –100
[14] साहित्यदर्पण,पृष्ठ –715
[15] गंगापुत्रावदानम्,पृष्ठ –85
[16] छंदोऽलंकारनिरूपणम् पृष्ठ –44
[17] गंगापुत्रावदानम्,पृष्ठ –88
[18] गंगापुत्रावदानम्,पृष्ठ –90

मधुरालाप करती हुयी तरुणियों में वनदेवता की बालचंद्रमुखी सखियों की संभावना की गयी है। अन्यत्र भी –

"चित्तं हरन्ती रजनीचराणां
विभाति चण्डीव हि कोमलांगी "।।[19]

प्रथम सर्ग में कई स्थलों पर कवि ने देवभूमि के वर्णन को विरोधाभास अलंकार में वर्णित किया है। जहाँ वस्तुतः विरोध न होने पर भी दो वस्तुओं में आपाततः विरोध की प्रतीति होती है वहां विरोधाभास अलंकार होता है– "विरोधः सोविरोधोपि विरुद्धत्वेन यद्वचः "[20] यथा –

अस्त्युत्तराखंड इति प्रदेशः
शैलाधिराजांकतले निषण्णः।
कांतारकांतेन विभीषणोपि
लावण्यलीलाललितानुभाव।।[21]

शैलाधिराज की गोद में स्थित उत्तराखंड सिंह की स्थिति से भयंकर होते हुए भी अपनी लावण्यलीला से ललित अनुभाव वाला है अर्थात् भयंकर भी है और ललित भी है।अतः विरोधाभास है। और भी–

यद्रक्षणार्थं भवति प्रयत्नः
तेनैव तेषां कुलमूलनाशम्।
कृत्वाऽपि रक्षार्थमिह प्रयासः
सतां विलासस्य विचित्रलीला।।[22]

व्यास जी के पुत्र मोह की स्मृति के साक्षीभूत उत्तराखंड में स्थित वृक्ष आज भी उन स्मृतियों को धारण किये हैं, इस बात को कवि ने अतिश्योक्ति के माध्यम से व्यक्त करते हैं –

मुनिः पुराणो निजपुत्रमोहाद्
यदा स्वयं कातरतामवाप।
तत्साक्षिणस्ते विलसन्ति वृक्षाः
यत्राधुनापि स्मृतिमादधानाः।।[23]

अन्यत्र भी दृष्ट्व्य है –

शिलातले यत्र वसन्ति लोकाः
प्रालेयशय्यां स्वयमेव लब्ध्वा।
गंगामृतस्वादायमवाप्य कश्चित्
जानाति नो तीव्रतरां बुभुक्षाम्।।[24]

गंगाजल पान से ही भूख समाप्त होना अतिश्योक्ति है।
वाक्यार्थ अथवा पदार्थ जहाँ किसी का हेतु बने वहां काव्यलिंग अलंकार होता है। " हेतोर्वाक्यपदार्थत्वे काव्यलिंगं निगद्यते " [25]

घने वने नास्ति दिनेशतापो
न वा पयोदस्य जलप्रपातः।
प्रयोजनाभावमवाप्य लोकाः
पर्णोटजायां सततं वसन्ति।।[26]

यहाँ पर्णकुटी में निवास करने का हेतु सघन वन को बताया गया है। अन्यत्र –

कलिप्रभावात् सुरभूमिरेषा
असुरस्य धात्री भवतीव भाति।।[27]

देवभूमि असुरों की धात्री का हेतु कलिप्रभाव बताया है, अतः काव्यलिंग है।
कालिदास के प्रिय अर्थान्तरन्यास अलंकार से भी कवि ने अपने काव्य को अलंकृत किया है – " भवेद् अर्थान्तरन्यासोऽनुषक्तार्थान्तराभिधा " अर्थात् जहाँ अर्थ का समर्थन करने वाला अप्रस्तुत अर्थ वर्णित हो वहां अर्थान्तरन्यास अलंकार होता है।[28] भौतिक विकास से विकसित लोगों के धुएं को पीकर मेघ प्रचंड हो जाता है,सत्य ही है कि दूसरे के पापों का दंड समय के प्रभाव से सज्जन को ही भोगना पड़ता है–

अधोगतानामिह धूमराशिं
निपीय मेघो भवति प्रचंडः।
पापं परेषां समयप्रभावात्
भुङ्क्तेऽत्र लोके सततं हि साधुः।।[29]

अन्य अर्थालंकारों में दीपक, संदेह, परिसंख्या और पुरुक्तवदाभास अलंकारों का प्रयोग किया है। उनमें दीपक यथा –

नेत्रं हरत्यत्र समगतानां
वने लता स्वच्छजले मृणाली।
आतिथ्यभावो गृहिणो गृहण्याः
सत्कर्मसंपादनदक्षता च।।[30]

यहाँ नेत्र हरण क्रिया के अनेक करक विद्यमान होने से दीपक अलंकार है। अन्य श्लोकों में –

सूर्ये प्रतापो जड़ता च चन्द्रे
कार्ष्ण्यं घने विद्युति चञ्चलत्वं।
संशोभते स्थानविपर्ययेन
कदापि सौख्यं न विधिप्रयोगे।।[31]

देवभूमि की युवतियों में कवि संदेह अलंकार के द्वारा सौंदर्य की कल्पना करता है –

अत्रत्यसौंदर्यविलासलीला
सिन्धौ निमग्ना सुरराजबाला।
जानाति नो का रमणीयनेत्रा
मृगांगना वास्ति कुलांगना वा।।[32]

इस प्रकार कवि ने महाकाव्य के प्रथम सर्ग में शब्दालंकार और अर्थालंकार दोनों का प्रयोग किया है, उसमें भी अर्थालंकार प्रयोग में कभी की रुचि विशिष्ट है। अलंकारों का विधान स्वतः और सहज ही हुआ है। अनावश्यक रूप से अलंकारों को नहीं स्थापित किया गया। निःसंदेह अलंकारों के स्वाभाविक प्रयोग से रस का ही उत्कर्ष होता है।

संदर्भ ग्रन्थ सूची

1. काव्यप्रकाश –आचार्य मम्मट, व्याख्याकार – वासुदेव शास्त्री, आयसाक्षर मुद्रक, संस्करण 1929
2. गंगापुत्रावदानम् महाकाव्यम् प्रथम सर्ग, डा.निरंजन मिश्र, संपादक – डा शैलेश कुमार तिवारी, प्रकाशक –सत्यम् पब्लिशिंग हाउस नई दिल्ली, संस्करण 2016

[19] गंगापुत्रावदानम्,पृष्ठ –92
[20] छंदोऽलंकारनिरूपणम् पृष्ठ –62
[21] गंगापुत्रावदानम्,पृष्ठ –67
[22] गंगापुत्रावदानम्,पृष्ठ–94
[23] गंगापुत्रावदानम्,पृष्ठ –75
[24] गंगापुत्रावदानम्,पृष्ठ –76
[25] छंदोऽलंकारनिरूपणम् पृष्ठ –70
[26] गंगापुत्रावदानम्,पृष्ठ–76
[27] गंगापुत्रावदानम्,पृष्ठ–93
[28] छंदोऽलंकारनिरूपणम् पृष्ठ –92
[29] गंगापुत्रावदानम्,पृष्ठ–85
[30] गंगापुत्रावदानम्,पृष्ठ–91
[31] गंगापुत्रवदानम्,पृष्ठ–99
[32] गंगापुत्रवदानम्,पृष्ठ–89

3. साहित्यदर्पण– आचार्य विश्वनाथ, व्याख्याकार –डा सत्यव्रत सिंह, चौखम्बा विद्याभवन वाराणसी
4. छंदोऽलंकारनिरूपणम् –डा राजेश सिंह, प्रगतिशील प्रकाशन, नई दिल्ली, संस्करण 2016